कृषि विपणन

३१ मार्च १९३८

चौधरी चरण सिंह

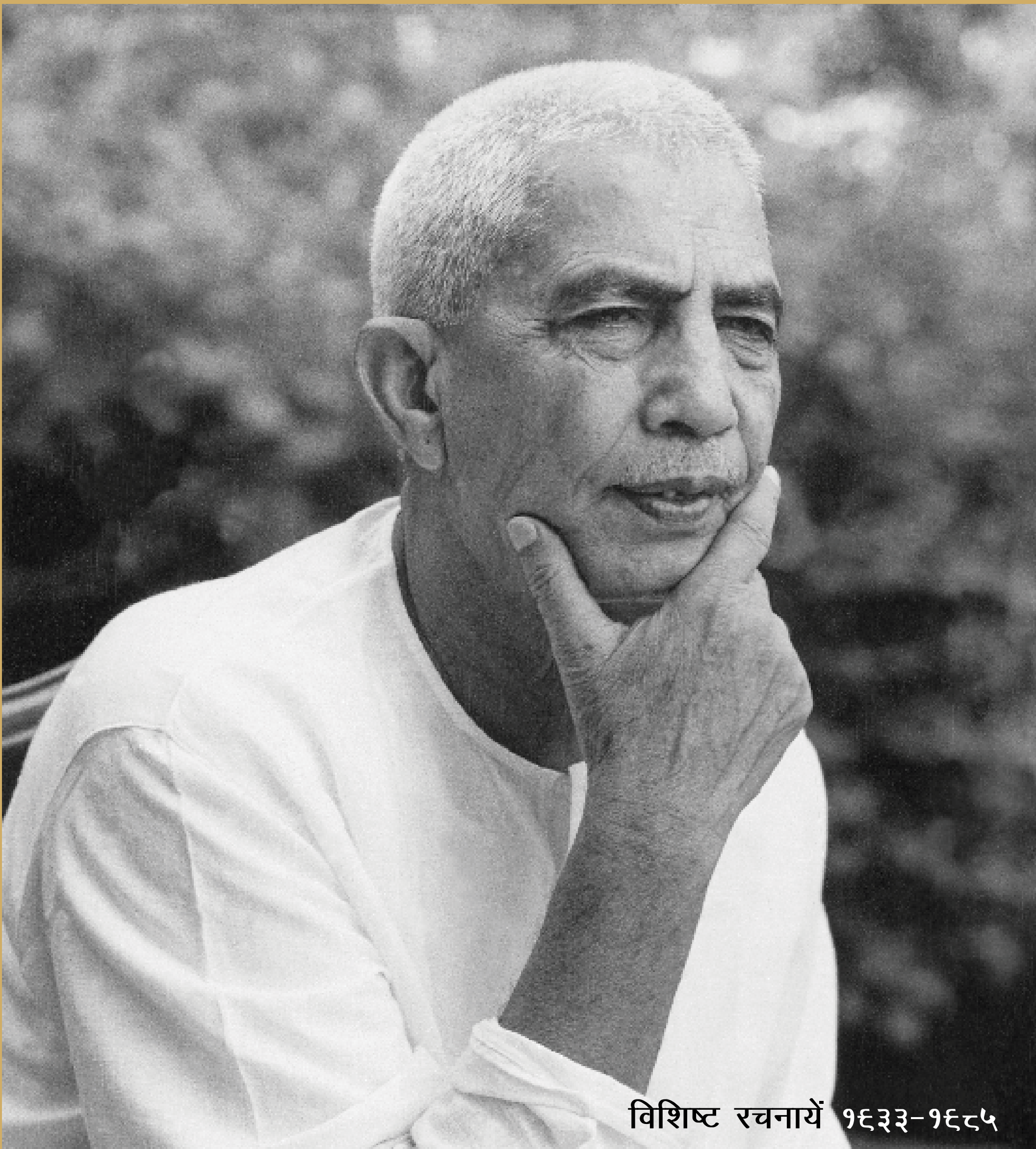

विशिष्ट रचनायें १९३३-१९८५

२६ जनवरी २०२२

चरण सिंह अभिलेखागार द्वारा प्रकाशित

www.charansingh.org

info@charansingh.org

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन को केवल पूर्व अनुमति के साथ
पुनः प्रस्तुत, वितरित या प्रसारित किया जा सकता है।
अनुमति के लिए कृपया लिखें info@charansingh.org

अक्षर तथा आवरण संयोजन राम दास लाल
सौरभ प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड, ग्रेटर नोएडा, भारत द्वारा मुद्रित।

चरण सिंह के पिता मीर सिंह तथा माता नेत्र कौर, १९५०

चरण सिंह का जन्म २३ दिसंबर १९०२ को "एक साधारण किसान के यहां छप्पर छवाये मिट्टी की दीवारों से बने घर में हुआ था, जहां आंगन में एक कुंआ था, जिसका पानी पीने और सिंचाई के काम आता था।"[1] संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) के मेरठ जिले के नूरपुर गांव में एक पट्टेदार गरीब किसान की कच्ची मढ़ैया में पैदा हुआ यह शिशु आज़ाद भारत में देहात की बुलंद आवाज बना।

* चरण सिंह के अपने शब्दों में

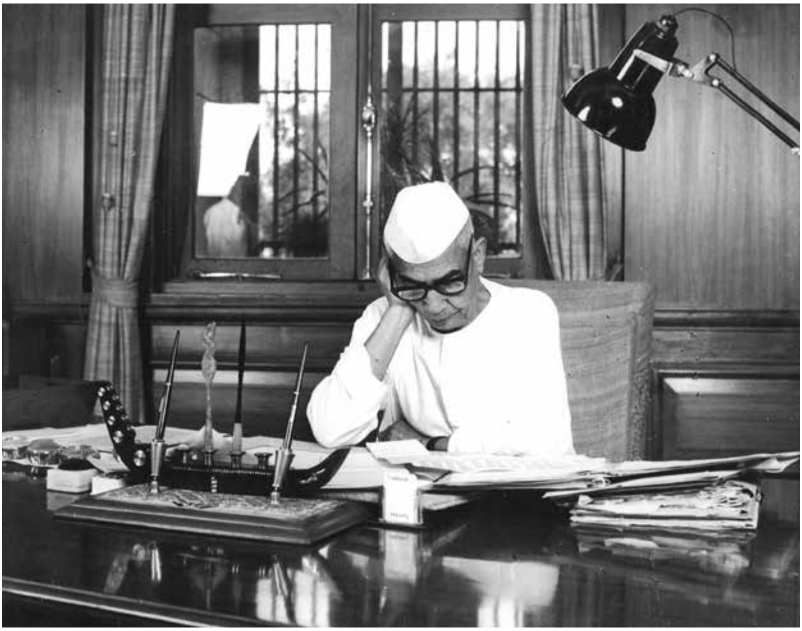

चौधरी चरण सिंह
भारत के प्रधान मंत्री। दिल्लीं, १९७९

ग्रामीण भारत के जैविक बुद्धिजीवी

१
कृषि विपणन (I)
मंडी में किसान की लूट

तरह–तरह के करों, कटौतियों और शुल्कों की बसूली कर, स्थानीय प्रशासन और मंडी में बिचौलिया वर्ग किसान का किस तरह शोषण करता था तथा तौल में गड़बड़ी, कर्दा, धर्मादा और बट्टा आदि की आड़ में उसकी किस तरह खुली लूट की जाती थी, चौधरी चरणसिंह ने व्यावहारिक रूप से इसे देखा और महसूस किया था। एक विस्तृत सर्वेक्षण के आधार पर, किसान की लूट को ज़ाहिर करते हुए, उन्होंने इस लूट पर तुरन्त रोक लगाने तथा इन करों, कटौतियों और शुल्कों को कम करने अथवा समाप्त करने के लिए कानून बनाने की ज़रूरत पर बल दिया था।

दिल्ली से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के, ३१ मार्च, १९३८ और १ अप्रैल, १९३८ के, अंकों में, उपरोक्त विषय से सम्बद्ध दो लेख प्रकाशित हुए थेः "कल्टीवेटर लूजेज १५ पर्सेंट थ्रो लेवीज" तथा "प्रपोज्ड लेजिस्लेशन फार रेगुलेशन।"

इन लेखों को पढ़कर पंजाब प्रान्त के तत्कालीन राजस्व मंत्री सर छोटू राम ने चौधरी चरणसिंह के पास अपने निजी सचिव श्री टीकाराम को भेजा था तथा विचार–विमर्श के बाद पंजाब में इन्हीं विचारों के आधार पर कृषि विपणन सम्बन्धी कानून बनाया। आजादी के बाद १९४९ में जो मंडी समिति कानून अस्तित्व में आया, वह भी चौधरी साहब के इन्हीं विचारों पर आधारित था। चौधरी साहब के ये विचार यहां दो भागों में प्रस्तुत हैंः

किसान किसी भी राष्ट्र का प्रमुख आधार है। वह किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था का अति महत्त्वपूर्ण सूत्र है। यह किसान ही है, जिसे सर्वाधिक श्रम करना पड़ता है, जो अपनी उपज का अधिकांश अपने देशवासियों

को वस्त्र एवं पोषण हेतु दे देता है और अपने लिए बहुत थोड़ा हिस्सा रखता है। यॅरप एवं अन्य विदेशी मुल्कों में सरकारें, कम से कम महायुद्ध के बाद, अपने किसानों की स्थिति सुधार की ओर बहुत ध्यान देती रही हैं। पश्चिमी देशों की सरकारों ने बिना समय बर्बाद किये, विश्व–बाज़ार के बदलते हुए हालात को देखते हुए, कृषकों की मदद करने की स्थिति में आने के लिए अधिनायकीय शक्ति (डिक्टेटोरियल पॉवर) हासिल की है और अनेकों प्रस्ताव पारित किये हैं। परिणाम यह रहा है कि पश्चिमी देशों के किसानों ने मंदी पर काबू पा लिया है। किन्तु भारतीय किसान की हालत क्या है? सरकारी एजेन्सी द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार १९३० से उसकी आय ५३ प्रतिशत से भी अधिक नीचे जा चुकी है किन्तु उसके ऊपर दायित्व–भार वही है, जो पहले था; समय गुजरने के साथ, उसको पीस डालने वाले ऋणों की ब्याज–अदायगी में अक्षमता के कारण, इसमें बढ़ोत्तरी हुई है। सरकारी बकाया पहले की ही भांति है। मुद्रा और विनिमय उसके विरुद्ध जोड़–तोड़ के तौर पर प्रयोग किये गये हैं।

विदेशी बाज़ार उसके लिए बंद हो चुके हैं। संक्षेप में, उसकी छोटी–सी नौका पर इतना भार लदा है कि वह डूब रही है और यदि उसके लिए बड़े पैमाने पर कदम नहीं उठाये जाते, हम शीघ्र ही उसकी अन्तिम यात्रा के बारे में सुनेंगे या हमें इतिहास के सबसे बड़े सामाजिक विप्लव के लिए तैयार रहना चाहिए?

बाज़ार की हालत

इस तथा इससे अगले लेख में हम भारतीय कृषि संगठन के एक पक्ष पर विचार प्रस्तावित करेंगे–मसलन स्वदेशी बाज़ारों का व्यवस्थापन। वह स्थान मुहैया कराना राज्य का काम है, जहां लोग मानवीय ज़रूरतों की वस्तुओं को बेचने और खरीदने की नियत से इकट्ठे हो सकें और यह देखना कि ऐसे स्थान का प्रबंधन ईमानदारी से हो रहा है और यह कि प्राथमिक उत्पादक को उसके उत्पादन का उचित प्रतिफल मिलता है। हमारे बाज़ारों की हालत निराशाजनक है। यह बेहद जरूरी है कि वहां व्याप्त बुराईयों तथा गड़बड़ियों को समाप्त करने के लिए कुछ आवश्यक कदम तुरन्त उठाये जायें, जो किसान को आर्थिक घाटा पहुंचाती है, देशी बाज़ार में बदनामी दिलाती हैं और इस प्रकार हमारे विदेशी व्यापार में गिरावट का कारण बनती हैं। हम उन विभिन्न वसूलियों से शुरूआत करते हैं, जो किसान को अपना उत्पादन बाज़ार में ले जाते समय चुकानी होती है।

नगरपालिका कर

जब किसान बाज़ार पहुंचता है, उससे पहले ही उसे अधिकांशतः चंगी, टोल या टर्मिनल टैक्स के तौर पर, सड़कों के रख–रखाव तथा नगर अथवा नोटिफाइड एरिया, जहां बाज़ार स्थित होता है, की अन्य सुख–सुविधाओं के लिए कर (पैसा) चुकाना होता है। सीधे तौर पर लागू ये चुंगी और करों की वसूली किसान के लिए काफी खटकने वाली बात है। जिस तरह सापेक्ष मूल्यों के आधार पर न लगाकर, मनमाने आधार पर उनसे लेवी वसूली जाती है, वह भी अन्यायपूर्ण है। इसके अलावा सीधे–सादे ग्रामीणों से जबरन कर वसूलना, जिसे 'मामूल' के बतौर जाना जाता है, नगर पालिका के चुंगी कर्मचारियों के लिए सामान्य बात है।

हमारे आर्थिक विशेषज्ञ हमें अभी तक यह बताते रहे हैं कि ये कर अन्ततः उत्पादक द्वारा नहीं बल्कि बढ़ाये गये मूल्य के रूप में उपभोक्ता द्वारा देय होते हैं। वास्तव में बात ऐसी नहीं है। आज–कल, जो हमारे महत्त्वपूर्ण उत्पाद हैं, वे या तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की वस्तु हैं या उनका मूल्य अन्तर्राष्ट्रीय कारकों से नियमित होता है।

अपने यहां के बाज़ारों में मूल्य का जो नियंत्रण होता है, वह प्रतिस्पर्धात्मक होता है एवं उसकी ऊपरी सीमा नियत होती है। "रिपोर्ट ऑन द मार्केटिंग ऑफ ह्वीट इन इंडिया" का लेखक कहता हैः "इस तथ्य के कारण कि इन टैक्सों का भुगतान शुरू में ही खेतिहर विक्रेता को करना पड़ता है, जिसके पास उसकी कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं होती है, इसलिए यह भार उसकी जेब को ही वहन करना पड़ता है।" हम पाते हैं कि ब्रिटिश–भारत की नगरपालिकाएं ही अकेले डेढ़ करोड़ रुपये चुंगी वसूल करती हैं। यह विशाल राशि भुखमरी के कगार पर पहुंचे खेतिहरों की जेब से ही आयी है, क्योंकि कृषिजन्य जिंसों पर ही चुंगी वसूल की जाती है। यह चुंगी भार अक्सर भुगतान करने की सामर्थ्य से बहुत ज़्यादा होता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि कई क्षेत्रों में, जैसे उत्तर प्रदेश में मेरठ एवं पंजाब में बहादुरगढ़ एवं सोनीपत में, चुंगी भार से बचने के लिए नगरपालिका की सीमाओं से परे मंडियों को स्थानांतरित कर दिया गया है। प्रांतीय सरकारों को इस पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए कि क्या शहरी लोगों पर उनकी अपनी ही सुविधा के लिए टैक्स देने के लिए जोर नहीं डाला जा सकता। इसका शायद सबसे बेहतर हल यह हो सकता है कि नगरपालिकाओं पर दबाव डाला जाए कि (कृषिजन्य जिसों के) आगमन पर टैक्स थोपने के बजाय ओकारा, मांटगोमरी एवं पंजाब के अन्य नगर औपनिवेशिक इलाके में स्थित थोक बिक्री वाले केन्द्रों

में होने वाली उपज के निर्यात पर टैक्स लगायें। अगर एकत्रित होने वाले केन्द्र से बाहर जाने वाली उपज पर टैक्स लगाया जाता है, तब उसका भार उपभोक्ता एवं गरीब खेतिहरों पर एक करोड़ से ज़्यादा का पड़ेगा।

मंडी शुल्क

बाज़ार में पहुंचते ही खेतिहर का सामना होता है आढ़तिया से, फिर रोला से जो उसकी उपज को साफ करता है, तौलने वाले से, ओटा से–जो थैले का मुंह खुला रखे रहता है एवं पल्लेदार से, जो थैलों को ढोता है। इन सभी का हमेशा, बिना किसी अपवाद के, मेहनताना खेतिहर–बिक्रेता को ही देना पड़ता है। उन बाज़ारों में जहां व्यापार संघ या बाज़ार पंचायत होती हैं, जैसा कि गाजियाबाद में है, वहां निश्चित बाज़ार शुल्क मुनीम जैसे छोटे कर्मचारियों, पानी पिलाने वाले, मेहतर, चौकीदार, रसोईया इत्यादि का भुगतान आढ़तिया करता है। हालांकि भारी तादाद में मौजूद उन बाज़ारों में, संगठित व्यापार का अस्तित्व ही नहीं होता, इस आशय की कटौती, जो बहुधा काफी बड़ी राशि होती है, विक्रेताओं से की जाती है। फिर कोई भी भिखारी वहां से मायूस नहीं लौटता। ऐसे सभी स्थानों पर इसके बाद खेतिहरों को धर्मादा देना पड़ता है–गौशालाओं को भी, शहरी बच्चों की शिक्षा के लिए एवं अन्य धर्मार्थ संस्थाओं को चलाने के लिए, जिससे उसको कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं मिलता। इसका सबसे आश्चर्यजनक पहलू हालांकि यह है कि धर्मार्थ के नाम पर जो चंदा खेतिहरों से वसूला जाता है, वह ऐसी किसी संस्था को नहीं मिलता बल्कि उसी राशि में से आढ़तिया गया एवं हरिद्वार की तीर्थयात्रा का खर्च निकाल लेता है। इसके साथ अन्य खुदरा शुल्क भी हैं, जो इन बाज़ारों में थोपे जाते हैं, उनमें 'बाज़ार चौधरी,' 'शागिर्दी' (वह भुगतान जिससे प्रशिक्षणार्थी आढ़तिया को मजदूरी दी जाती है), बट्टा (कटौती या विनिमय शुल्क), मुद्दत (सूद भरने के लिए शुल्क, क्योंकि विक्रेता को आढ़तिया तत्काल भुगतान करता है, लेकिन कई दिनों बाद खरीददारों से उसको भुगतान मिलता है) वगैरहा शामिल हैं। इस तरह के अधिकांश शुल्कों का भुगतान जिंसों में होता है, जिसे अपने लिए एवं उन दूसरे कर्मचारियों के लिए, जिससे उसका रोज–रोज का लेन–देन रहता है, लेते समय आढ़तिया और ज़्यादा उदार हो जाता है। जब मोल–भाव पूरा हो जाता है, तो उत्तर प्रदेश के कई बाज़ारों में विक्रेता को और भी परम्परागत कटौती का भुगतान भुगतना पड़ता है, जैसे कर्दा–जिंसों की अशुद्धता दूर करने के लिए (अपवर्तन), जो जिंसों में हो भी सकती है और नहीं भी। इस आशय की कटौती बहुत से

बाज़ारों में नियत होती है जैसा कि हाथरस में है, कई जगह यह लचीली होती है। इस पर टिप्पणी करने की ज़रूरत ही नहीं: इस प्रथा से मिलावट को बढ़ावा मिलता है। उत्तर प्रदेश के बाज़ारों में खरीदारों के देने के साथ उधार देने की भी प्रथा है, जिसकी दर प्रतिमन एक तिहाई से एक चौथाई सेर होती है, और धालता के साथ भी, यानि बटखड़ा भत्ता, क्योंकि जिंसों की खरीदारी ज़्यादा वजन के बटखड़ों में होती हैं। अतः उसे कम वजन के बटखड़े में बेचने के कारण हुए घाटे की क्षतिपूर्ति की जाती है।

भारी अन्तर

इन बाजारू करों के प्रति शिकायत न केवल उनकी बहुलता में निहित है बल्कि इस तथ्य में भी कि वे पूरी तरह स्पष्ट और उल्लेखित नहीं हैं। उनमें, एक बाज़ार से दूसरे बाज़ार के बीच, भारी अन्तर होता है और कुछ मामलों में वे विक्रेता द्वारा देय होते हैं, तो कुछ में खरीदार द्वारा। उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में औसतन स्वीकृत अल्पतम कुल शुल्क चुंगी सहित, प्रति १०० रुपये के उत्पाद पर ३ से ८ रुपये है, जिसमें दो रुपये विक्रेता द्वारा तथा १–से–८ रुपये खरीददार द्वारा देय हैं। उत्तर प्रदेश के केन्द्रीय और पूर्वी बाज़ारों में कुल शुल्क औसत प्रति १०० रुपये पर ६–से–१३ रुपये है, जिसमें ५–१०–१३ रुपये विक्रेता द्वारा देय हैं और १–२–९ रुपये खरीदार द्वारा। ये आंकड़े ह्वीट मार्केटिंग रिपोर्ट से लिए गये हैं।

हम समझते हैं कि गुड़ के मामले में शुल्क और कटौती अभी भी ऊंची है। यदि आप गलत तोलने तथा अन्य गड़बड़ियों की ओर भी ध्यान दें, जिनका विवरण हम यहां प्रस्तुत करेंगे, तो हम पाते हैं कि बहुत से मामलों में, कम से कम उत्तर प्रदेश के केन्द्रीय तथा पूर्वी हिस्सों में, किसान बाज़ार मूल्य का, जो वास्तव में चालू मूल्य होता है, ८५ प्रतिशत पाता है। बकाया १५ प्रतिशत चोरी–छिपे या खुले तौर पर उससे, इस या उस बहाने, हड़प लिया जाता है। इन शुल्कों से अलग, संग्रह–केन्द्र पर वितरण शुल्क, भी होता है, जिसे ध्यान में रखना होगा। परिवहन सम्बंधी और खरीद के स्थान तक ले जाने के खर्चे, भराई के बर्तनों की लागत, बोरियों के मुंह सीने के लिए सुतली, टूट–फूट और भी विभिन्न तरह के शुल्क–मसलन पत्र–व्यवहार का खर्चा आदि भी इस लागत में जुड़े हैं। जब क्रेता के लिए खरीदारी बाहर के बाज़ार से की जाती है, तब उक्त स्टेशन से क्रेता के गोदाम तक रेल परिवहन व्यय, ढुलाई–उतराई, चुंगी और धर्मादा शुल्क इस पर पुनः लगाया जाता है। जैसा कि देख चुके हैं, उपरोक्त खर्चों में

से कुछ तो विक्रेता से वसूले जाते हैं तथा अन्य क्रेता से, जो कि अंतिम उपभोक्ता के साथ–साथ अपना भाग प्रत्यक्षतः वहन करता है, किन्तु जैसा कि ह्वीट मार्केटिंग रिपोर्ट कहती है–"गेहूं पर किसान और उपभोक्ता के बीच लगाये गये सभी तरह के चुंगी शुल्क, सीमा कर, पथ कर, मंडी शुल्क तथा अन्य धर्मादा शुल्क, वापिस किसान पर ही थोप दिये जाते हैं, जिन्हें खुशी न खुशी उसे देने के लिए मजबूर किया जाता है।" एक अन्य स्थान पर इसी रिपोर्ट में कहा गया है, "मौजूदा हालत में किसान कुछ मामलों में उपभोक्ता द्वारा चुकाये गये एक रुपये में से नौ आना तीन पैसे ही प्राप्त कर पाता है।" इसका अर्थ यह है कि उपभोक्ता द्वारा चुकाये गये गेहूं के मूल्य का ४२ प्रतिशत बिचौलिये के पास चला जाता है।

फलों के बाज़ार की हालत भी भयानक रूप से खराब है। हाल ही में बम्बई से प्रकाशित फ्रूट मार्केट रिपोर्ट के अनुसार फलों एवं सब्जियों के लिए चुकाये गये १०० रुपये में से १२ रुपये से भी कम उत्पादक के हाथ में आते हैं, बाकी अन्य लोगों के पास पहुंच जाते हैं। कभी–कभी तो परिवहन व्यय भी उत्पादक के पल्ले नहीं पड़ता है। इन हालात में इस बात के लिए कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि भारत का किसान शोषण के अथाह गर्त में डूबा हुआ है।

'ह्वीट मार्केटिंग रिपोर्ट' में आगे कहा गया है, "किसान हर किसी के हितों को पूरा करता है और अपने उत्पादन का मूल्य घटा कर विपणन के सारे खतरों को झेलता है। इन हालात को देखते हुए उन सभी को, जो इन शुल्कों पर किसी भी किस्म का नियंत्रण रखते हैं, मन में किसान के हालात सुधारने के प्रति रुचि रखते हैं, इन करों और शुल्कों को कम करने अथवा समाप्त करने के प्रयास करने चाहिए। यदि किसानों के कल्याण हेतु इस दिशा में कुछ नहीं किया गया, तो हम संदेह के घेरे में आ जायेंगे। हमें आशा करनी चाहिए कि इस समय प्रांतों में स्थापित जिम्मेदार सरकारें किसानों के प्रति अपने कर्तव्य को निबाहेंगी।

गड़बड़ियां

धड़ा बिक्री की प्रथा उत्तर प्रदेश के कुछ पश्चिमी जिलों में प्रचलित है, जिसके तहत विभिन्न किस्मों के ढेर समान दर पर बेचे जाते हैं। हालांकि यह प्रथा क्रेता या आढ़तिया के ख्याल से लाभदायक है, क्योंकि इससे काम जल्दी निबटता है। दोनों पक्षों के लिए लिपिक–श्रम की काफी बचत होती है, इससे किसान द्वारा अपने उत्पाद की किस्मों को बेहतर करने में स्पष्ट रूप से बाधा पहुंचती है और कम उत्पादन करने वाले किसान

को उसकी अक्षमता के लिए ज़्यादा पैसा मिलता है। बिक्री की एक और पद्धति हैं, जिसके तहत क्रेता या उसका बिचौलिया एक कपड़े के अन्दर, जो अमूमन छोटा तौलिया या धोती होती है, आढ़तिया का हाथ पकड़ता है और उंगलियां दबाकर उस दर का संकेत करता है, जिसे अदा करने के लिए वह तैयार होता है।

यह बताने की ज़रूरत नहीं कि गुप्त बोली की इस प्रथा में गड़बड़ियों की गुंजाइश होती है, जिससे किसान–बिक्रेता को अमूमन नुकसान पहुंचता है। साथ ही क्रेता किसी बोली या स्वीकृति के प्रति बाध्य नहीं होता है। अगर उसी दिन उत्पाद की तौल पूरी नहीं होती और तौलने का काम अगले दिन के लिए छोड़ दिया जाता है, और इस बीच बाज़ार में कीमतें घट जाती हैं, तो एक बहाना बनाकर क्रेता विक्रेता से ज़्यादा छूट की मांग करता है। साथ ही, जब तौल जारी रहती है, तब क्रेता द्वारा करदा (कूड़ा) के ज़्यादा होने की शिकायत करना बिल्कुल आम बात है। अंततः क्रेता आधा गाड़ी के बाद माल लेने से तब तक इंकार कर देता है, जब तक किसान–विक्रेता, जिसके पास गाड़ी में फिर माल भरकर वापिस ले जाने के अलावा और कोई चारा नहीं होता, वस्तुतः तयशुदा कीमत को और कम नहीं करता। इन मामलों में किसान बिल्कुल निस्सहाय होता है; पूरी मंडी में उसकी ओर से कोई एक शब्द कहने वाला नहीं होता, जिसका दूसरा पक्ष पूरा–पूरा फायदा उठाता है।

गलत तौल

लेकिन किसान की दुखभरी कहानी यहीं खत्म नहीं होती। गलत तौल करना दूसरी गड़बड़ी है, जिसके जरिए उससे उसके उत्पाद का पांच प्रतिशत या ज़्यादा ही लूटा जाता है। खरीदने के समय गांव वाले से तौल में ज़्यादा उत्पाद लिया जाता है और बेचने के वक्त उसे तौल में कम दिया जाता है। इस सिलसिले में भेलियों के रूप में गुड़ के विपणन का उदाहरण आम है। अगर एक भेली वजन में एक छटांक कम होती है, तब सारी भेलियों में से दो–दो छटांक कम कर दिया जाता है और इस बात का ख्याल नहीं किया जाता कि बाकी सारी भेलियां अपेक्षित वजन से ज़्यादा वजन की भी हो सकती हैं।

इस तरह उससे ४२ सेर लेकर उसे सिर्फ ४० सेर की कीमत दी जाती है। पाठकों को यह जानकर हैरानी होगी कि हाल में पंजाब में किये गये एक सरकारी सर्वेक्षण के अनुसार उपयोग में लाए जाने वाले बाटों में से आधे से भी कम ही सही हैं, प्रत्येक तीन मापों में से दो

दोषपूर्ण हैं। संयुक्त प्रांतों में यही बात है। साथ ही प्रचलित तौल के विभिन्न तरीकों और प्रचलित बाट एवं माप पद्धतियों में इतनी असंगतियां हैं कि हैरानी होगी। एक जिले से दूसरे जिले में और कभी–कभी एक ही जिले में उनमें काफी फर्क होता है। जो व्यापारी ज़्यादा जाने–माने नहीं होते वे इन स्थितियों में बेईमानी करते हैं और जो इससे भी बदतर बात है, वह यह कि इससे संगठित विपणन के विकास को काफी धक्का पहुंचा है। अधिकांश नगर पालिकाओं एवं जिला बोर्डों ने स्थायी सरकार द्वारा बनाए गए मानक बाटों के इस्तेमाल के आदर्श नियम कायदे अपनाए हैं, लेकिन वास्तविक व्यवहार में वे अर्थहीन हैं। इसलिए बाटों और मापों के मानकीकरण और कृषि–विपणन में सुधार के लिए सही तराजुओं के इस्तेमाल और इस मामले में प्रांतीय सरकारों के हस्तक्षेप की ज़रूरत के बारे में दो मत नहीं हो सकते।

अनेकों मंडी शुल्क, जिनकी संख्या और आपतन (इंसीडेंस) के बारे में कुछ तय नहीं है, बाज़ार की जटिल प्रणाली, दुर्व्यवहार, जो किसान और उसके बैलों को झेलने पड़ते हैं–इन और दूसरी कई परेशानियों के कारण मंडी में खुद अपना उत्पाद ले जाकर उसके नतीजे झेलने का जोखिम उठाने के बजाए किसान गांव में ही उसे बेच देना बेहतर समझता है।

भण्डारण के लिए जगह

हमारे बाज़ार में भंडारण के लिए जगह की भी बेहद ज़रूरत है। जाने–माने कृषि–विशेषज्ञ चौधरी मुख्तारसिंह अपनी हाल में प्रकाशित किताब "एग्रेरियन रिलीफ्स इन फॉरेन कंट्रीज" में कहते हैं "बाज़ारों में भंडारण की सुविधाएं उपलब्ध नहीं कराई जातीं और विक्रेता, अगर बताई दर पर नहीं बेचना चाहता, तो उसे अपना माल वापस लाना और परिवहन का पूरा खर्च फिर देना पड़ता है या फिर बताई गई दर पर उसे बेचना पड़ता है।" वर्तमान में किसानों तक बाज़ार की खबरें पहुंचाने के लिए भी कोई माध्यम नहीं है। वे अफवाहों पर और गांव के व्यापारी तथा अपने पड़ोसियों या मंडी से लौटने वाले लोगों से मिली सूचनाओं पर बहुत ज़्यादा निर्भर करते हैं।

२
कृषि विपणन (II)
नियमन के लिए प्रस्तावित कानून

'कृषि विपणन' लेख के दूसरे भाग में चौधरी चरण सिंह ने उन सुझावों को प्रस्तुत किया, जिन पर अमल कर, किसान के शोषण को कमोवेश रोका जा सकता था। प्रस्तावित मसौदे से ज़ाहिर होता है कि सम्बन्धित विषय पर चौधरी साहब का कितना गहन चिंतन था।

हमारे सारे बाज़ारों में व्याप्त इस अस्त–व्यस्तता के कारण–गाजियाबाद हापुड़ और मुजफ्फरनगर को छोड़कर, जहां स्थानीय व्यापार संघों ने कुछ हद तक बाज़ार में कीमतों और व्यवहार का मानकीकरण किया–रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर, सेन्ट्रल बैंकिंग इन्क्वयारी कमेटी और मार्केटिंग स्टाफ ने यह अनुशंसा की है और राज्य सरकारों का ध्यान तत्काल इस ज़रूरत की ओर देने के लिए दबाव डाला है कि बाज़ार में कीमतें कम और नियमित की जाएं और विभिन्न कृषि मंडियों की वर्तमान व्यापार प्रणालियों में नियंत्रण किया जाए। रॉयल कमीशन के काम शुरू करने के पहले से ही बेलार और बम्बई में कुछ बाज़ारों को नियमित और नियंत्रित करने वाले कानून, जिन्हें क्रमशः 'बेलार कॉटन एण्ड ग्रेन मार्केट लॉ, १८९७' और 'बाम्बे कॉटन मार्केट्स एक्ट' के नाम से जाना जाता है, लागू थे। कमीशन ने उनके आधार पर दूसरे राज्यों में भी कानून लागू करने की अनुशंसा की है। हैदराबाद स्टेट्स, मद्रास और सेन्ट्रल प्रोविंसेज की सरकारों ने क्रमशः १९२९, १९३३ और १९३५ में कमीशन के इशारे पर नियम बनाये। इन कानूनों ने खेतिहरों को काफी लाभ पहुंचाया है, हालांकि व्यापारियों के गलत व्यवहार पर शुरू में हाय–तौबा मची, पर आगे चल कर उन्होंने कानून की अच्छाइयों की प्रशंसा की। यह तथ्य कि उपर्युक्त कानून काफी सफल रहे, इस बात से स्पष्ट हो जाएगा कि उपर्युक्त सरकारों ने अपने अधिकार क्षेत्र

के ज़्यादा से ज़्यादा बाज़ारों में उनके प्रावधानों को लागू किया है और हालांकि इन्हें लागू हुए काफी समय नहीं हुआ, राज्य और केन्द्रीय विपणन अधिकारियों ने हाल की अपनी एक बैठक में, अब तक जो उनके लाभकारी नतीजे हासिल हुए हैं, उन पर संतोष ज़ाहिर किया है। यह तथ्य कि व्यापार और विपणन के साफ सुथरे और ईमानदार तरीके दीर्घ काल में व्यापारियों के हित में भी होंगे, इस बात से साबित होता है कि २८ फरवरी से २ मार्च तक १९३८ में कलकत्ते में हुई अपनी बैठक में भारतीय केन्द्रीय जूट कमेटी ने बंगाल सरकार को नियमित मंडियां स्थापित करने और बॉम्बे कॉटन मार्केटिंग एक्ट तथा मद्रास एग्रीकल्चरल क्रॉप्स मार्केट एक्ट की तरह जूट के विपणन पर नियंत्रण के लिए कानून बनाने की अनुशंसा करना तय किया। कमेटी ने बंगाल सरकार को बाटों और मापों के मानकीकरण का भी सुझाव दिया। पंजाब के विकास मंत्री सर छोटूराम ने पंजाब विधान सभा में वैसा ही विधेयक पेश करने का अपना सही इरादा ज़ाहिर किया है। कृषि मंडियों के नियमन और नियंत्रण वाकई इतने जरूरी हैं कि कोई भी सरकार, जो किसानों के हित की शुभचिंतक है, इस मामले में लापरवाह नहीं हो सकती। मुझे पूरा विश्वास है कि उत्तर प्रदेश में हमारी अपनी कांग्रेस सरकार, जो आजकल काश्तकारी, स्थानीय स्वायत्त शासन और ऋण–मुक्ति कानूनों को बनाने में बेहद व्यस्त है और जिसके पास निःसंदेह बहुत ज़्यादा काम हैं, शीघ्र ही इस तरह के जरूरी कानून को बनाकर जनता की सरकार होने के अपने दावे को न्यायोचित ठहराएगी।

नियंत्रण के लिए विधेयक

अब मैं प्रस्तावित कानून के बारे में मोटी–मोटी बातों को संक्षेप में बताऊंगा। अब तक बाज़ारों का प्रबंधन–कुछ को छोड़कर, जैसे उत्तर प्रदेश में बस्ती और नौगढ़, जिनके मालिक जमींदार हैं, और जो १६ मन वाली हरेक गाड़ी से तीन से छह आने तक शुल्क वसूलते हैं–स्थानीय बोर्डों, मसलन नगरपालिकाओं, के हाथों में था, जो अपनी जिम्मेदारी निभाने में पूरी तरह असफल रहे हैं। किसान, जिसके हित सबसे ज़्यादा प्रभावित हुए हैं, का अब तक बाज़ारों के प्रबंधन में कोई अधिकार नहीं था। इसलिए अब यह प्रस्तावित किया जा रहा है कि वर्तमान प्रबंधन को मंडी समिति से ज़्यादा अधिकार दिए जायें और उसमें किसानों का प्रतिनिधित्व हो। उनका प्रतिनिधित्व कैसे होगा, इसके लिए विस्तृत बातचीत की ज़रूरत है और इसके बारे में यहां हमें चर्चा करने की ज़रूरत नहीं है।

इसका मतलब है कि कानून को राज्य की सारी मंडियों में नहीं, बल्कि सिर्फ उन्हीं मंडियों में लागू होना चाहिए, जो सरकार द्वारा अधिसूचित किए गए हैं। राज्य सरकार को ऐसा कानून बनाना चाहिए, जिसमें अन्य चीजों के अलावा निम्नलिखित के लिए प्रावधान हो:

(१) बाज़ार के व्यापारियों, बिचौलियों और तुलैयों को लाइसेंस देने के लिए, उनसे लिए जाने वाले शुल्क को तय करने के लिए, इन लाइसेंसों को किन स्थितियों में दिया जाए और उनके लिए क्या शुल्क लिया जायेगा, इसके लिए। जिसके पास मंडी समिति का लाइसेंस नहीं होगा, उसे व्यापारी, बिचौलिये या तुलैये के रूप में काम नहीं करने दिया जाएगा।

(२) विवरण और समय–समय पर निरीक्षण, सत्यापन, संशोधन, नियमन और बाज़ार में इस्तेमाल होने वाले तराजुओं, बाटों और मापों की जब्ती के लिए। सही–सही तौल की जिम्मेदारी व्यापारी पर होगी और उसे गलत तौल करने के लिए अपने लाइसेंस से हाथ धोना पड़ेगा।

(३) किसी मंडी में किसी व्यक्ति द्वारा लेन–देन में ट्रेड एलाउन्सेज, शुल्क या छूट देने या हासिल करने या इस तरह के एलाउन्सेज की सूची बाज़ार में विशेष स्थान पर लगाने के लिए। अगर कोई अपने न्यायोचित शुल्क या हिस्से से ज़्यादा लेगा, तो उसका लाइसेंस निलम्बित कर दिया जाएगा।

(४) क्रेता और विक्रेता को उचित रसीद और हिसाब–किताब के विवरण देने के लिए। लेन–देन को सुविधाजनक बनाने और विवाद से बचने के लिए क्रेताओं व विक्रेताओं के बीच लिखित अनुबंध की व्यवस्था होनी चाहिए।

(५) विभिन्न कृषि उत्पादों की किस्मों का एकरूप मानदंड तय करने के लिए, ताकि एक ही किस्म के उत्पाद की कीमत एक हो सके और बेहतर किस्मों के उत्पादों की कीमत शीघ्र तय की जा सके।

परम्परागत शुल्क जैसे, करदा, धालता और दांणे को अवैध घोषित किया जाना चाहिए और बिना मंडी समिति की मंजूरी के किसान को कोई शुल्क और चन्दा, चाहे वह दान के लिए हो या किसी धार्मिक उद्देश्य के लिए, न देना चाहिए, न उससे वसूला जाना चाहिए। गुप्त चिह्नों के जरिए लेन–देन की प्रथा और धड़ा प्रथा के तहत बिक्री पर कड़ा प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।

मंडी समिति

मंडी समिति के पास, जो एक नियमित संस्था होगी और बाज़ार में व्यापार नियमित करने, बेहतर भण्डारण करने, मंडी की व्यवस्था बनाये रखने और उसमें सुधार करने, मंडी के लिए जरूरी भवन और सड़कें बनवाने और मरम्मत करने, बाटों का प्राधिकृत सेट रखने, मंडी में आने वाले उत्पादों, आदमियों और मवेशियों के लिए बेहतर आश्रय, जल–व्यवस्था और स्वास्थ्य सम्बंधी सुविधाओं के लिए मंडी की आम स्थितियों में सुधार लाने, मंडी में दैनिक मूल्यों की सूची, जो सिर्फ उस मंडी की नहीं, बड़े थोक बाज़ार या बाज़ारों, जिससे वह मंडी सीधे–सीधे जुड़ी हुई है, लगाने, अपने अधिकारियों और कर्मचारियों को रखने, आदि के लिए अपना कोष होगा।

मध्यस्थता

मंडी में लेन–देन के कारोबार में पैदा होने वाले विवादों का निपटारा मंडी समिति या उसकी उप–समिति करेगी और अनुबंध में इसका प्रावधान होना चाहिए। अगर कोई क्रेता तयशुदा कीमत पर विक्रेता का उत्पाद अपने यहां पहुंचने पर लेने से इंकार करेगा, तो मामला मंडी समिति को भेजा जायेगा और उसे समिति का निर्देश मानना होगा।

इस ख्याल से कि मंडी समिति प्रभावपूर्ण ढंग से काम कर सके, जनता के हितों के रक्षक के रूप में राज्य को यह अधिकार होना चाहिए कि वह किसी अक्षम मंडी को खारिज करके, मंडी का प्रशासन अपने हाथों में ले सके। ब्रिटेन के खाद्य एवं औषध कानून, १९२८, में ऐसा ही प्रावधान है। ऐसी कार्यवाही से मंडी शुल्क घट जाएगा या कम हो जायेगा और नियमित हो जाएगा, व्यापार प्रणाली पर नियंत्रण होगा, मापों और बाटों का मानकीकरण होगा और बेईमानी खत्म हो जाएगी, किसान–विक्रेता का हित सुरक्षित रहेगा और मंडी के उचित शुल्कों को छोड़कर उसके उत्पाद का सारा बाज़ार मूल्य उसे मिलेगा और कमीशन के आधार पर बिक्री की वर्तमान प्रथा बेहतर हो जाएगी, क्योंकि कमीशन एजेण्ट को अपना लाइसेंस दिखाना पड़ेगा। इस कार्यवाही से, किसान को अपना उचित हक मिलेगा, उसे अपने उत्पाद की बेहतर किस्में पैदा करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा और विदेशी बाज़ारों में भारतीय कच्चे मालों से जुड़ा एक कलंक दूर होगा। इत्तफाक से एक फायदा और होगा कि लाइसेंस शुल्कों से प्राप्त राशि से कृषि उत्पादों, जैसे फल, घी आदि पर मार्का लगाने और

उनकी श्रेणियां तय करने के लिए राज्य के विपणन अधिकारियों को कोष का आबंटन करना सम्भव होगा।

स्पष्ट है कि यह कानून नगरपालिका के करों के बोझ को कम नहीं करेगा, न ही इससे बिचौलियों को दिये जाने वाले शुल्क पूरी तरह खत्म हो जाएंगे। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए दूसरे व्यापक और कड़े कानून बनाने होंगे। यह कार्यवाही सिर्फ विपणन व्यवस्था की कुछ खामियों को दूर करने और उसके कुछ पहलुओं में सुधार लाने के लिए है।

चौधरी चरण सिंह द्वारा रचित कृतियां

शिष्टाचार, १९४१. (२०१ पृष्ट)

हाउ टू एबोलिश जमींदारीः ह्विच एल्टरनेटिव सिस्टम टू एडाप्ट। (ज़मींदारी उन्मूलन कैसे करें: किस वैकल्पिक प्रणाली को अपनाएं) १९४७. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

एबोलिशन ऑफ ज़मींदारीः टू अल्टरनेटिव्ज। (जमींदारी उन्मूलनः दो विकल्प) १९४७. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (२६३ पृष्ट)

एबोलिशन ऑफ जमींदारी इन यू० पी०: क्रिटिक अंसरड। (उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलनः आलोचकों को जवाब) १९४९. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

व्हितहर कोआपरेटिव फार्मिंग? (सामूहिक खेती की दिशा?) १९५६. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश।

एग्रेरियन रिवोल्यूशन इन उत्तर प्रदेश। (उत्तर प्रदेश में कृषि क्रांति) १९५७. प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, गवर्नमेंट ऑफ उत्तर प्रदेश १९५८ लखनऊ, सुपरिन्टेन्डेन्ट, प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश। (६६ पृष्ट)

जॉइंट फार्मिंग एक्स–रैडः द प्रॉब्लम एंड इट्स सोल्यूशन। (संयुक्त खेतीः समस्या और समाधान) १९५९. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (३२२ पृष्ट)

इण्डियाज पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशन। (भारत की गरीबी और उसका समाधान) १९६४. एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई। (५२७ पृष्ट)

इण्डियन इकोनॉमिक पॉलिसीः दि गांधियन ब्लूप्रिंट। (भारत की अर्थनीतिः एक गांधीवादी रूपरेखा) १९७८. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (१२७ पृष्ट)

इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉज़ एण्ड क्योर। (भारत की भयावह आर्थिक स्तिथिः कारन एवं निदान) १९८१. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (५९८ पृष्ट)

लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू० पी० एण्ड दि कुलक्स। (उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार एवं कुलक वर्ग) १९८६. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (२२० पृष्ट)

'विशिष्ट रचनाएं: चौधरी चरण सिंह' भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री चरण सिंह द्वारा १६३३ और १६८५ के बीच लिखित २२ महत्वपूर्ण लेखों और भाषणों का संग्रह है। इस पुस्तक के अध्ययन से आज का पाठक वर्ग जान सकेगा कि मौजूदा समय की चुनौतियां न तो नई हैं और न ही समाधानहीन। इनसे निपटने के लिए एक मन–सोच अथवा जिगरा चाहिए, जो निश्चय ही धरा–पुत्र चरण सिंह में था। उनका लेखन उस प्रकाशस्तंभ की तरह है जो समुद्र में भटके हुए जहाजों को किनारे तक आने का रास्ता दिखाता है। उनके लेखन के आलोक में हम मौजूदा चुनौतियों को सही परिप्रेक्ष्य में न केवल समझ सकते हैं अपितु उनका समाधान भी पा सकते हैं। इन लेखों में उनकी राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि के दर्शन होते हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इन लेखों को सामाजिक लेखन, आर्थिक लेखन, राजनीतिक लेखन एवं उपसंहार – चार खण्डों में विभाजित किया गया है।

चौधरी चरण सिंह की अध्यात्मिक अंतश्चेतना और राजनीतिक मेधा महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा गांधी से अनुप्रेरित रही, तो सरदार पटेल उनके नायक रहे। इन विभूतियों पर चौधरी साहब ने अपने विचार लेखों में प्रस्तुत किये हैं। जाति–प्रथा, आरक्षण, जनसंख्या नियंत्रण, राष्ट्रभाषा जैसे सामाजिक मुद्दों के साथ ही शिष्टाचार जैसे विरल विषय पर भी दो लेख **खण्ड एक: सामाजिक लेखन** में दिये गये हैं।

चौधरी साहब भारत की उन्नति का मूल आधार कृषि, हथकरघा और ग्रामीण भारत को मानते थे। उनकी दृष्टि में ग्रामीण भारत ही वह नियामक तत्व रहा जिसे प्रमुखता देकर देश को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जा सकता है, साथ ही बेरोजगारी जैसी विकट समस्या को भी दूर किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश में भूमि सम्बंधी सुधारों और जमींदारी समाप्त करने को लेकर चौधरी चरण सिंह पर धनी किसानों के पक्षधर होने के आरोप विरोधियों ने लगाये। उनका उन्होंने बेहद तार्किक ढंग से उत्तर दिया है। गांव–किसान और खेती के प्रति उपेक्षापूर्ण नीतियां एवं काले धन की समस्या जैसे तथा उपरोक्त विषयों पर केन्द्रित लेख **खण्ड दो: आर्थिक लेखन** के अन्तर्गत दिये गये हैं।

खण्ड तीन: राजनीतिक लेखन के अन्तर्गत भारत की लम्बी गुलामी के मूल कारणों का विश्लेषण, गांधी–चिंतन, देश में पहली गैर–कांग्रेसी जनता पार्टी की सरकार की आधारभूत नीतियां, देश विख्यात माया त्यागी कांड का समाजशास्त्रीय विश्लेषण, भाषा आधारित राज्यों के खतरे आदि मुद्दों के अलावा उनके नायक सरदार पटेल की स्मृति पर आधारित लेख हैं। इसी खण्ड में चौधरी साहब के ऐतिहासिक महत्व के दो भाषण भी संकलित हैं, जो लोकशाही पर संकट और राष्ट्रीय विघटन के खतरों के प्रति सचेत करते हैं।

अंतिम **खण्ड चार: उपसंहार** है, जिसमें चौधरी साहब ने राजनीति, समाज नीति और देश से सम्बंधित अधिकतर मुद्दों पर संक्षेप में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

Charan Singh Archives

www.charansingh.org

मूल्य ₹६६